इकाई 12 वक्रोक्ति संप्रदाय : स्वरूप और परिधि

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 वक्रोक्ति : अवधारणा एवं स्वरूप

12.3 वक्रोक्ति के प्रकार

12.4 वक्रोक्ति : समर्थक आचार्य एवं उनके मत

12.5 हिंदी आलोचकों के वक्रोक्ति संबंधी मत

12.6 वक्रोक्ति सिद्धांत का मूल्यांकन

12.7 सारांश

12.8 अवधारणात्मक शब्द

12.9 उपयोगी पुस्तकें

12.10 बोध प्रश्न

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- वक्रोक्ति की अवधारणा और उसके स्वरूप को समझ सकेंगे,
- वक्रोक्ति के प्रकारों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे,
- वक्रोक्ति के प्रवर्तक अचार्य कुंतक और इस संप्रदाय के समर्थकों के विचारों को जान सकेंगे, और
- वक्रोक्ति से संबंधित हिंदी साहित्यकारों के मतों से परिचित हो सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

आप जानते हैं कि जीवन में अभिव्यक्ति– कौशल, प्रस्तुति भंगिमा और बातचीत के लहजे का विशेष महत्व है। अपनी बात प्रभावी ढंग से कहने के लिए सहजता के साथ भंगिमामयी अभिव्यक्ति की भी आवश्यकता होती है। चलताऊ ढंग से की गई बात का कोई विशेष महत्व नहीं होता और न वह विशेष असरदार ही हो पाती है किंतु भंगिमापूर्ण प्रस्तुति (या बात) आकर्षक होने के साथ-साथ जल्दी से संप्रेषित भी हो जाती है। इसी प्रकार काव्य या साहित्य में भी विशिष्ट अभिव्यक्ति न होकर विशिष्ट या भंगिमापूर्ण अभिव्यक्ति है। वस्तुतः भंगिमा या वक्रता में सौंदर्य की स्थिति मानी जाती है। 'वक्र' से 'बाँका – बाँके' शब्द बने जो सुंदर की अभिव्यक्ति करते हैं।

BHDC-106.indd 151 19-03-2021 08:51:38

यहाँ तक कि श्रीकृष्ण का नाम ही बाँके बिहारी पड़ गया क्योंकि वे त्रिभंगललित मुद्रा में वंशी-वादन करते हैं और यह छवि सर्व मोहिनी हो गई । काव्य में वक्रोक्ति का विशेष प्रभाव माना जाता है। यह काव्यशास्त्र का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। यों तो एक अलंकार के रूप में आचार्य भामह के समय से ही वक्रोक्ति का विशेष महत्व था। सभी अलंकारों के मूल में इसी की स्थिति मानी जाती थी और यह व्यापक मान्यता थी 'अलंकारों अनयाविना' अर्थात वक्रोक्ति के बिना कोई अलंकार (सौंदर्य) नहीं हो सकता है। यहाँ आप वक्रोक्ति की अवधारणा, स्वरूप, प्रकार महत्व आदि के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे।

12.2 वक्रोक्ति : अवधारणा एवं स्वरूप

वक्रोक्ति का सामान्य अर्थ वक्र-उक्ति अर्थात् वक्र या वित्रित्र कथन या टेढ़ा कथन है। यह माना जाता है कि सामान्य बोलचाल में शब्दों का प्रयोग जिन अर्थों में होता है, उन्हीं अर्थों से सुंदर काव्य की रचना नहीं हो सकती। काव्य-रचना के लिए तो वैचित्र्ययुक्त कथन की आवश्यकता अपरिहार्य है। सामान्य कथन शैली से भिन्न चमत्कार प्रधान (वैचित्र्ययुक्त) कथन को वक्रोक्ति के रूप में माना जाता है। वक्रोक्ति को वैदग्धाभंगीभणिति कहा है, जिसमें शब्द और अर्थ का सौंदर्य मिला रहता है। वस्तुतः शब्द और अर्थ को कुंतक अलंकार्य (वर्ण-वस्तु) मानते है और वक्रोक्ति उनको सौंदर्य प्रदान करने वाला तत्व अलंकार है।

उभावेतावलंकार्यौ तयोः पुन रत्नंकृतिः।

वक्रोक्ति वैदग्धाभंगीभणितिरुच्यते। (वक्रोक्ति जीवितम्) 'वैदग्ध्य' का तात्पर्य विदग्धता है अर्थात् कविकर्म-कौशल और भंगी अर्थात् भंगिमा तथा उसके आधार पर किया गया कथन वक्रोक्ति हैं। आचार्य कुंतक ने विचित्र अमिधा को ही वक्रोक्ति माना है – विचित्रैवामिधा वक्रोक्तिरित्युच्यते। 'वैचित्र्य' का आशय विशिष्ट चारुता से है। कुंतक यह भी मानते हैं कि वक्रोक्ति में सहृदयों को आहलादित करने की क्षमता होनी चाहिए। वक्रोक्ति में तीन विशेषताएँ होती हैं– (i) लोक व्यवहार तथा शास्त्र में रुढ़ शब्द अर्थ प्रयोग से भिन्नता (ii) कवि प्रतिभाजन्य चमत्कार तथा (iii) सहृदय के मन को आनंदित करने की क्षमता।

अतः कहा जा सकता है कि शास्त्र तथा व्यवहार मे प्रयुक्त होनेवाले सामान्य कथन से बिल्कुल भिन्न विचित्र उक्ति वक्रोक्ति हैं। इस प्रकार की उक्ति (वक्रोक्ति) कवि-व्यापार कौशल और प्रतिभा से संभव होती है। यह लोकोत्तर आह्लादकारिणी होती है अर्थात् इससे प्राप्त आनंद सामान्य नहीं होता है। वक्रोक्ति से असुंदर में सुंदर का समावेश होता है। आचार्य कुंतक ने वक्रोक्ति को बहुत महत्व प्रदान किया क्योंकि उनके पूर्ण इसे एक प्रमुख अलंकार माना जाता था। उन्होंने 'वक्रोक्ति जीवित' की रचना कर इसे सिद्धांत के रूप में प्रतिपादित किया और काव्य का जीवित (प्राण) सिद्ध किया। इस प्रकार सम्पूर्ण काव्यव्यापार का मूल वक्रोक्ति है।

12.3 वक्रोक्ति के प्रकार

आचार्य कंतुक के अनुसार वक्रोक्ति के छह प्रकार हैं –

1) वर्ण विन्यास वक्रता

2) पद पूर्वार्द्ध वक्रता

3) पद परार्द्ध वक्रता

BHDC-106.indd 152 19-03-2021 08:51:38

4) वाक्य वक्रता

5) प्रकरण वक्रता

6) प्रबंध वक्रता

1) **वर्ण विन्यास वक्रता** : वक्रोक्ति की इस वक्रता का संबंध वर्ण विन्यास अर्थात् वर्णों को विशेष क्रम में रखने से है। जब एक, दो या कई वर्ण कुछ अंतराल के पश्चात उसी रूप में रखे जाएँ तो यह वक्रता होती है। इसमें वर्णों को सामान्य रूप से न रखकर ऐसे ढंग से, विचित्र रीति से विन्यस्त किया जाता है कि उनमें सौंदर्य उत्पन्न हों और वह सहृदयों के लिए आह्लादक हो। इस वक्रता के अंतर्गत अनुप्रास, यमक आदि अलंकार आ जाते हैं। आचार्य कुंतक ने काव्य रीतियों – कोमला, परुषा और उपनागरिका को इस वक्रता में समाहित किया है। 'वर्ण शब्दोऽत्र व्यंजन पर्यायः' कहकर कुंतक ने स्पष्ट किया है कि वर्ण का अभिप्राय व्यंजन से है। इस वक्रता में वर्ण संबंधी सभी चमत्कार समाहित हो गए हैं।

कुंतक ने वर्ण विन्यास के संबंध में कुछ नियम भी निर्धारित किए हैं –

(i) वर्ण विन्यास प्रस्तुत या वर्ण विषय के अनुरूप तथा वर्ण-विषय के सौंदर्य को बढ़ाने वाला होना चाहिए। वर्ण-विषय में अभिव्यक्त रस के अनुकूल वर्णों का प्रयोग आवश्यक है। जहाँ कोमल भावों की अभिव्यक्ति हो वहाँ परुष वर्णों – द वर्ग, आदि की योजना नहीं होनी चाहिए और इसी प्रकार कठोर भावों या रसों के योग में कोमल वर्णों– क वर्ग, च वर्ग आदि की योजना अनुपयुक्त है।

(ii) वर्ण विन्यास वक्रता में अनौचित्यपूर्ण वर्णों की हठपूर्वक योजना नहीं होनी चाहिए।

(iii) वर्ण विन्यास वैचित्र्ययुक्त हो अर्थात् सौंदर्यपूर्ण हो। उसमें नए-नए वर्णों की योजना हो और पूर्व प्रयुक्त वर्णों की अधिक पुनरावृत्ति न हो।

(iv) यमक के प्रयोग में विशेष रूप से प्रसाद गुण की योजना होनी चाहिए।

(v) वर्ण विन्यास श्रुति माधुर्य से युक्त हो तथा अनौचित्य रहित हो। वर्ण विन्यास वक्रता का एक उदाहरण –

कुंकन किं किन नूपुर धुनि सुनि। कहत लखन सन राम हृदय मुनि।

इन पंक्तियों में अनुप्रास का सुंदर प्रयोग है – (रामचरित मानस, बालकांड) क वर्ण की अनेक बार आवृत्ति से सौन्दर्य बढ़ गया है। यह संयोग श्रृंगार का प्रसंग है, इसीलिए इसमें कोमल वर्णों का प्रयोग उपयुक्त है। 'लखनसन' में समश्रुतिमूलक वर्णों की योजना से वैचित्र्य लक्षित होता है।

2) **पद पूर्वार्द्ध वक्रता** : वर्ण विन्यास वक्रता के अन्तर्गत कुंतक ने वर्ण समूह अर्थात् पद वक्रता का उल्लेख किया है। पहले पद पूर्वार्द्ध वक्रता का विवेचन किया गया है। इस वक्रता को प्रकृति वक्रता भी कहते हैं क्योंकि पद पूर्वार्द्ध में प्रतिपादित या धातु का प्रयोग होता है। अतः पद पूर्वार्द्ध वक्रता में प्रतिपादिक अथवा धातु के कारण निष्पन्न वैचित्र्य रहता है। इस वक्रता में व्याकरण से संबंधित प्रयोगों का चमत्कार घटित होता है। इस वक्रता के दस भेद हैं – (i) रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता (ii) पर्याय वक्रता (iii) उपचार वक्रता (iv) विशेषण वक्रता (v) संवृत्ति वक्रता (vi) प्रत्यय वक्रता (vii) वृत्ति वक्रता (viii) भाववैचित्र्य वक्रता (ix) लिंग वैचित्र्य वक्रता (x) क्रिया वैचित्र्य वक्रता।

BHDC-106.indd 153 19-03-2021 08:51:38

i) **रूढ़ी वैचित्र्य वक्रता** : वर्णवस्तु (प्रस्तुत) की प्रशंसा या तिरस्कार के लिए रूढ अर्थ पर जब अतिशय रमणीय अर्थ का प्रयोग कवि द्वारा किया जाता है तो रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता होती है। इस वक्रता में रूढ़ि के द्वारा किसी शब्द में वैचित्र्य का समावेश होता है जैसे –

सिय पितु मातु सनेह बस बिकल न सकी सँभारि।
धरमिसुता धीरज जरेउ समउ सुधरमु बिचारी।।
(*रामचरित मानस अयोध्याकांड,* दो० 286)

इस उद्धरण में 'धरनिसुता' में यह भाव रूढ़िगत है कि पृथ्वी सबकुछ सहनकर लेती है तो उसकी पुत्री सीता अवश्य सहनकर सकती है।

ii) **पर्याय वक्रता** : जो वक्रता पर्याय पर आधरित होती है, वह पर्याय वक्रता है। एक ही अर्थ को व्यक्त करने वाले शब्दों को पर्यायवाची कहा जाता है। कवि इन अनेक पर्यायों में से अपने वर्ण विषय को अधिक रमणीयता प्रदान करता है, तो वैचित्रय (सौंदर्य) में वृद्धि होती है। प्रतिभाशाली कवि अनेक समानार्थी शब्दों में किसी एक शब्द की मूल भावना को ह्रदयंगम कर उसका प्रयोग करता है जिससे उसकी रचना में एक विशिष्ट आकर्षण और सौंदर्य उत्पन्न हो जाता है। जैसे–

(क) <u>अबला</u> जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।

(ख) <u>नारी</u> तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास रतज नगपगतल में।

(ग) एक कनक एक कामिनी दुर्गमघाटी दोय।

उपर्युक्त उद्धरणों में अबला, नारी और कामिनी पर्याय शब्द हैं। पहले उद्धरण में 'दुर्बलता' दूसरे उद्धरण में 'मानवी' और तीसरे उद्धरण में 'वासना-प्रेरक' के अर्थ में प्रयुक्त है इन पर्याय शब्दों के प्रयोग से अर्थगत रमणीयता आ गई है, जो सह्रदयों को आह्लादित करती है।

iii) **उपचार वक्रता** : 'उपचार' शब्द का काव्यशास्त्रीय अर्थ 'आरोप, साधर्म्य, समानता या सादृश्य' है। जहाँ भिन्न स्वाभावयुक्त वस्तु (प्रस्तुत) पर अप्रस्तुत वस्तु का स्वल्प सादृश्य के कारण आरोप किया जाता है, वहाँ यह वक्रता होती है। इस वक्रता के अंतर्गत प्रस्तुत (उपमेय) और अप्रस्तुत (उपमान) में यदि एक चतन तो दूसरा अचेतन, एक मूर्त तो दूसरा अमूर्त होता है। इन दोनों में थोड़ी समानता होने पर भी अभेद आरोप कर वैचि्रय की सृष्टि की जाती है। इस वक्रता के अंतर्गत रूपक आदि अलंकार आते हैं। हिंदी में छायावादी कवियों की रचनाओं में इस वक्रता का अधिक प्रयोग दिखाई देता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

(क) हे लाज भरे सौंदर्य बता दो, मौन बने रहते हो क्यों? (*प्रसाद*)

यहाँ लाज का मानवीकरण करते हुए उसे सौंदर्य से भरा हुआ कहने पर उपचार वक्रता है।

(ख) सिकता की सस्मित सीपी पर
मोती ज्योत्सना रही विचार। (*सुमित्रानंदन पंत*)

BHDC-106.indd 154 19-03-2021 08:51:38

यहाँ चाँदनी के प्रभाव से सी पी पर सस्मित होने का आरोप है।

iv) **विशेषण वक्रता** : विशेषण के प्रभाव से यदि कारक या क्रिया में सौंदर्य (वैचित्रय) उत्पन्न हो।

विशेषण के प्रयोग के दो उद्देश्य माने गए हैं –

पहला, विशेष्य (प्रस्तुत) के वैशिष्ट्य या सौंदर्य को अभिव्यक्त करना और दूसरा, अलंकर को अधिक रमणीय बनाना। विशेषण कारक अथवा क्रिया से मिलकर सौंदर्य में अभिवृद्धि करता है। अतः इसके दो भेद हो जाते हैं, कारक वक्रता और क्रिया विशेषण वक्रता। विशेषण वक्रता का उदाहरण इस प्रकार है –

(क) तारक चिह्न दुकूलिनी, पी-पी कर मधुपात्र।
उलट गई श्यामा यहाँ रिक्त सुधाधर पात्र।। (*साकेत*)

इस उद्धरण में श्यामा (रात्रि) के लिए 'तारकचिह्न दुकूलिनी' विशेषण प्रयुक्त है, जो अतिशय रमणीय है।

v) **संवृति वक्रता** : संवृति का अर्थ छिपाना, ढकना या संवरण करना है, आचार्य कुंतक के अनुसार जहाँ वैचित्र्य प्रतिपादन की इच्छा में सर्वनाम आदि के द्वारा वस्तु का संवरण किया (छिपाया) जाए, वहाँ यह वक्रता होती है। इस वक्रोक्ति में विचित्रता व्यक्त करने के लिए सर्वनाम द्वारा वस्तु के रूप को छिपाया जाता है। जब कवि अनुभूत वस्तु को वाणी द्वारा व्यक्त करने में समर्थ नहीं होता तो संवृति वक्रता के द्वारा उस वस्तु सौंदर्य को अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से व्यक्त करता है। उदाहरण–

अनियारे दीरघ नयन किती न तरुनि समान।
वह चितवनि और कछू जिहि बस होत सुजान।। (*बिहारी सतसई*)

इस उद्धरण में कवि नायिका की सुंदर दृष्टि भंगिमा का वर्णन न कर पाने पर 'वह' सर्वनाम के प्रयोग द्वारा दिया (संवृत कर दिया)।

iv) **प्रत्यय वक्रता** : जब प्रत्यय के द्वारा वस्तु के औचित्य की शोभा वृद्धि होती है तो यह वक्रता मानी जाती है। संस्कृत के काव्यों में इस वक्रता का प्रयोग अधिक हुआ है क्योंकि संस्कृत में प्रत्यय - प्रयोग बहुत स्पष्ट हैं। हिंदी-काव्यों में भी कुछ सुन्दर उदाहरण मिल जाते हैं। उदाहरण –

(क) पिय सों कहेउ सँदेसड़ा हे भौरा हे काग।
सो धनि बिरहै जरि मुई तेहिक धुवाँ हम लाग।। (*जायसी*)

(ख) गई बहोरि गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।।
(*रामचरितमानस*)

उपर्युक्त उद्धरण 'क' में 'सँदेसड़ा' में 'ड़ा' प्रत्यय के कारण तथा उद्धरण 'ख' में 'बहोरि' के कारण प्रत्यय वक्रता का चमत्कार व्यक्त है।

एक अन्य उदाहरण – आग लाग घर जरिगा, विधि भल कीन्ह।
पिय के हाथ घइलवां, भरि-भरि दीन्ह।।

इसमें 'घइलवा' (घड़ा) में 'वा' प्रत्यय बहुत चमत्कारपूर्ण है।

BHDC-106.indd 155 19-03-2021 08:51:38

vii) **वृत्ति वक्रता** : 'वृत्ति' का तात्पर्य संस्कृत व्याकरण के अंतर्गत आनेवाले समास, तद्धित (प्रत्यय), सुबन्त (शब्द रूप) आदिवृत्तियों से है। इन वृत्तियों के प्रयोग से वैचित्र्य या रमणीयता होने पर वृत्ति वक्रता मानी जाती है। उदाहरण –

(क) तुमने यह कुसुम–विहण। लिवास क्या अपने मुख से स्वयं बुना?
यहाँ 'कुसुम–विहग' में समास के कारण वैचित्र्य हैं।

(ख) तुम कौमुदी-सी पराग पथ पर
संचार करती चलो मधुरिका।

यहाँ 'मधुरिमा' मधुर का प्रत्यय समन्वित प्रयोग रमणीय है।

viii) **भाव वैचित्र्य वक्रता** : क्रिया की वक्रता ही भाव वैचित्र्य वैचित्र्य है। वस्तुतः क्रिया किसी कार्य का निष्पादन होने के कारण साध्य रूप है। जहाँ क्रिया के साधक रूप का तिरस्कार करके उसे सिद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाए, वहाँ यह वक्रता होती है। उदाहरण –

क्षलित शत तरंग तनुपालित
अवगाहित प्रगरित अतिनिर्मल।

ix) **लिंग वैचित्र्य वक्रता** : जहाँ लिंग संबंधी प्रयोग में वैचित्र्य लक्षित हो, वहाँ यह वक्रता होती है किंतु प्रयोग में औचित्य अवश्य होना चाहिए। उदाहरण –

तुम रूपराशि हो, दीपशिखा,
तुम शशि सुंदर, तुम कमलकली,
तुम हो गुलाब का फूल,
हमारे उर-उपवन में रहो खिली।

इस उद्धरण में 'दीपशिखा' के लिए स्त्रीलिंग और पुल्लिंग – दोनों का प्रयोग करने से रमणीयता आ गई है।

(अ) **क्रिया वैचित्र्य वैचित्र्य वक्रता** : क्रिया के प्रयोग मे जहाँ रमणीयता हो वहाँ यह वक्रता होती है। उदाहरण–

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुबाय।
सौंह करै भौहनि हँसै, दैन कहै नटि जाय।।

इस उदाहरण की दूसरी पंक्ति में क्रियाओं का बहुत रमणीय प्रयोग है।

3) पद परार्द्ध वक्रता : पद परार्द्ध वक्रता में पदों के उत्तरार्द्ध के वैचित्र्य का विवेचन होता है। पद परार्द्ध में प्रत्ययों का योग होता है, अतः यह वक्रता का प्रत्यय रूपा होती है। आचार्य कुंतक ने इस वक्रता के छह उपभेद किए हैं, जिनका विवेचन इस प्रकार है –

(क) **काल वैचित्र्य वक्रता** : जब काल विशेष के कारण रचना में वैचित्र्य (सौंदर्य) की सृष्टि होती है तो यह वक्रता मानी जाती है। वर्तमान काल में यदि भूतकाल या भविष्यत् काल का अनुमान किया जाए तो काल वैचित्र्य हो जाएगा। कुंतक ने कालवैचित्र्य प्रयोग में औचित्य पर विशेष बल दिया है। उदाहरण –

BHDC-106.indd 156 19-03-2021 08:51:38

जा थल कीन्हे बिहार अनेन्दन
ता थल काँकरि बैठि चुन्यो करै।
जा रसना से करी बहु बातन
ता रसना सों चरित्र गुन्यों करें।
आलम जौन से कुंजन में करि
केलि तहाँ अब सीस धुन्यो करै।
नैनन में जो सदा रहते
तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करै। (*आलम कवि*)

इस उद्धरण में नायक के संयोग (भूतकाल) को क्रियाकलापों का वर्णन वर्तमानकाल में होने के कारण काल वैचित्र्य है।

दूसरा उदाहरण–

नासा मोरि नचाय दृग करी कका की सौंह।
काँटे-सी कसकति हिये गड़ी कटीली भौंह।। (*बिहारी*)

नायक के हृदय में नायिका की भौंह जब गड़ी हो,
तब गड़ी से हो किंतु अब भी कसक रही है।।

(ख) **कारक वक्रता** : जब वैचित्र्य या सौंदर्य के अभिप्राय से कारकों में परिवर्तन (विपर्यय) किया जाता हो तो कारक वक्रता होती है। इसमें गौंण (सामान्य) कारक को प्रधान रूप में अथवा प्रधान कारक को गौण रूप में प्रस्तुत कर उसका विपर्यय कर दिया जाता है। अचेतन में चेतन का आरोप करके सौंदर्य में अभिवृद्धि की जाती है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं –

- कोमल आँचल ने पोछा मेरी गीली आँखों को।

इस उद्धरण में आँचल (अचेतन) में चेतन का आरोप कर उसका कर्त्ता कारक में प्रयोग किया गया, जो अतिशय रमणीय है।

- हर धनुर्भंग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त (*राम की शक्ति पूजा*)

इस काव्य पंक्ति में हस्त (हाथ) का प्रयोगकर्त्ता कारक में हुआ है, जो वस्तुतः करण कारक का होता है। यहाँ करण कारक का विपर्यय कर्त्ता कारक में होने से चमत्कार सिद्धि हुई है।

(ग) **वचन वक्रता** : जब चारुत्व (सौंदर्य) सिद्धि के लिए वचन में विपर्यय कर दिया जाता है अर्थात् एकवचन के स्थान पर बहुवचन तथा बहुवचन के स्थान पर एकवचन का प्रयोग किया जाता है तो वचनवक्रता होती है। उदाहरण –

अगनित वसंत की रंग, गंध उठ धाईं।
ऐसी मुस्कान की जैसे चाँदनियाँ छिटकीं।
सरस द्रुमों की धूती मादक पुरवाई।।

इस उद्धरण में चाँद का 'चाँदनियाँ' बहुवचन प्रयोग चमत्कारपूर्ण है।

(घ) **पुरुष वक्रता** : जब पुरुष (अन्य, मध्यम तथा उत्तम) में विपर्यय करके चमत्कार (सौंदर्य) उत्पन्न किया जाता है तो पुरुष वक्रता होती है इसमें उत्तम पुरुष या मध्यम पुरुष के लिए अन्य पुरुष का प्रयोग कर वैचित्र्य (रमणीयता) की सिद्धि की जाती है। उदाहरण–

करके आज ध्यान इस जन का निश्चय वे मुस्काये।
फूल उठे हैं कमल अधर से ये बंधूक सुहाये।। (*साकेत*)

इस उद्धरण में साकेत की उर्मिला ने अपने लिए उत्तम पुरुष का प्रयोग न करके अन्य पुरुष (इस जन) का प्रयोग किया है।

(ङ) **उपग्रह वक्रता** : व्याकरण में 'उपग्रह' का अर्थ धातु (क्रिया) होता है। संस्कृत भाषा में धातुओं के दो पद होते हैं – परस्मैपद और आत्मनेपद। कवि इनका प्रसंगानुसार प्रयोग कर वैचित्र्य उत्पन्न करता है। हिंदी में इस वक्रता का प्रयोग कम हुआ है।

उदाहरण – मैं जभी तोलने का करती
उपचार, स्वयं तुल जाती हूँ (*कामायनी*)

इस उद्धरण में 'तोलने' और 'तुल जाने' का प्रयोग चमत्कारपूर्ण है।

(च) **प्रत्यय वक्रता** : जब छोटे-छोटे प्रत्ययों के प्रयोग से चमत्कार उत्पन्न होता है तो प्रत्यय वक्रता होती है। उदाहरण –

अब जीवन कै है कपि, आस न कोय।
कनगुरिया कै मुँदरी, कंगन होय।। (*बरवै रामायण – तुलसी*)

(प्रसंग, सीताजी का हनुमान से कथन) यहाँ 'कनगुरिया' (कनिष्ठिका) में 'या' प्रत्यय के प्रयोग से नियोग जन्य दौर्बल्य की अतिशयता व्यक्त हुई है, जो चमत्कारपूर्ण है।

4) वाक्य वक्रता : किसी वर्णवस्तु के चमत्कारपूर्ण वर्णन को वाक्य वक्रता कहते हैं। इसे वाक्य वक्रता ही कहा जाता है। इस वक्रता में आचार्य कुंतक ने अलंकारों का समावेश किया है। वाक्य या वाक्य वक्रता के दो भेद हैं– सहजा और आहार्या। 'सहजा' से कुंतक ने स्वभावोक्ति का अर्थ ग्रहण किया है और उसे अलंकार न मानकर अलंकार्य स्वीकार किया है क्योंकि इससे वस्तु का वर्णन किया जाता है। 'आहार्या' के अंतर्गत उपमा आदि अलंकारों का समावेश है।

उदाहरण –

घिर रहे थे घुँघराले बाल
अंश अवलंबित भुख के पास ।
नील घन शावक से सुकुमार
सुधा भरने को विधु के पास।। (*कामायनी, श्रद्धाकर्म*)

श्रद्धा के कांतिमय मुख के निकट कंधों तक बिखरे घुँघराले बालों का श्याम घन शावक है। चंद्र के पास सुधा भरने के लिए उपस्थित होना, अलंकृत वर्णन है किंतु इसमें अत्यधिक सहजता है।

5) प्रकरण वक्रता : प्रबंध के एक अंश या एक प्रसंग को प्रकरण कहते हैं। अनेक प्रकरणों के समुच्चय से प्रबंध निर्मित होता है। प्रकरणों के रसमय, भव्य और मौलिक होने पर प्रबंध की महत्ता बढ़ती है। कुंतक ने इस वक्रता के निम्नलिखित उपभेद किए हैं –

BHDC-106.indd 158 19-03-2021 08:51:38

(क) भावपूर्ण स्थिति की उद्भावना : जहाँ कवि प्रबंध के प्रमुख पात्र या अन्य पात्रों के चरित्र को औदात्यपूर्ण तथा उत्कर्षमय बनाने के लिए भावपूर्ण घटना या स्थिति की उद्भावना करता है, वहाँ प्रकरण वक्रता का यह भेद होता है। इस वक्रता में मौलिकता और भावुकता की स्थिति होती है।

(ख) उत्पाद्य लावण्य : इस प्रकार की वक्रता में कवि प्रबंध में वर्णित इतिहास-प्रसिद्ध इतिवृत्त में अपनी कल्पना से नवीन प्रसंग जोड़कर वैचित्र्य उत्पन्न करता है या अनौचित्यपूर्ण प्रसंगों में संशोधन करता है।

(ग) प्रधानकार्य से संबद्ध प्रकरणों को उपकार्य : उपकारक भाव से संबद्ध करना आवश्यक है। कवि की योजना होती है कि प्रत्येक प्रकरण में मुख्य प्रकरण से संबद्ध होकर उसके उत्कर्ष एवं लक्ष्य-सिद्धि में सहायक हो।

(घ) विशिष्ट प्रकरण की अतिरंजना : इस प्रकार की वक्रता में कवि अपनी प्रतिभा से एक ही प्रसंग को नए-नए रूपों में नियोजित कर वैचित्र्य की सिद्धि करता है और इस कार्य में पुनरूक्ति दोष भी नहीं आने पाता और न एकरसता रहती है। संयोग और वियोग की स्थितियों के समावेश से इतिवृत्ति में सरसता आ जाती है।

(ङ) रोचक प्रसंगों का विस्तृत वर्णन : कवि अपने प्रबंध में रोचकता और सरसता लाने के लिए इतिवृत्त में यथाचार जल-विहार, उद्यान-भ्रमण, नगर शोभा वर्णन, प्रभात-संध्या-सौंदर्य-वर्णन आदि प्रसंगों को विस्तृत रूप प्रदान करता है।

(च) प्रधान उद्देश्य की सिद्धि के लिए रोचक गौण प्रसंग की उद्भावना : जब कवि अपने प्रबंध के प्रधान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए रमणीय एवं सरस गौण या अप्रधान प्रसंगों की योजना करता है तो– इस प्रकार की वक्रता होती है।

(छ) गर्भांक-वक्रता : यह उपभेद मुख्यतः दृश्य काव्य (नाटक) पर विशेष रूप से घटित होता है। सामाजिकों (दर्शकों) को आकृष्ट करने के लिए एक नाटक में अन्य नाटक का प्रयोग करना गर्भांक कहलाता है।

(ज) प्रकरणों का पूर्वापर उन्नित क्रम : प्रबंध की सफलता के लिए प्रकरणों का उत्तरोत्तर एक-दूसरे से संबंद्ध होना आवश्यक है। अतः प्रकरणों की सम्यक् योजना करना इस वक्रता का विषय है।

6) प्रबंध वक्रता : वक्रोक्ति के सभी प्रकारों में प्रबंध वक्रता सर्वाधिक विशिष्ट है। इस वक्रता का संबंध सम्पूर्ण प्रबंध के सौंदर्य एवं प्रभाव से होता है। आचार्य कुंतक ने प्रबंध वक्रता के छह उपभेद किए हैं, जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं–

(क) मूल रस परिवर्तन : जब कवि इतिहास-प्रसिद्ध मूल कथानक की उपेक्षाकर उसमें नवीनता, रमणीयता लाने के लिए उसका रस में परिवर्तन करता है तथा अन्य रस का विधान करता है तो इस प्रकार की वक्रता होती है। नए रस की योजना के लिए उसे मूल रस परिवर्तन के साथ मूलक या विधान में भी परिवर्तन करना पड़ता है। इस प्रकार

BHDC-106.indd 159 19-03-2021 08:51:38

के रस परिवर्तन द्वारा कवि अपनी प्रबंध कृति में रमणीयता उत्पन्न करता है। 'साकेत' महाकाव्य में इस प्रकार की वक्रता दृष्टिगत होती है।

(ख) नायक के चरित्र का उत्कर्ष करने वाली चरम घटना पर कथा का सत्यापन : इस प्रकार की वक्रता में कवि चरित्र प्रधान प्रबंधों में पूरे इतिवृत्त का वर्णन न कर नायक को उत्कर्ष प्रदान करने वाले किसी एक अंश पर कथानक का समापन कर देता है। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' रचित 'प्रिय प्रवास' ओर 'वैदेहीबनवास' इसी प्रकार के प्रबंध काव्य हैं।

(ग) नामकरण वक्रता : प्रतिभाशाली कवि प्रबंध के नामकरण में वैचित्र्य-विधान करते हैं और अपने प्रबंध काव्य का नामकरण इस प्रकार करते हैं कि उसमें संपूर्ण प्रबंध का रहस्य निहित हो। संस्कृत के 'अभिज्ञान शाकुन्तलम (कालिदास)' मुद्राराक्षस (विशाखदत्त) आदि तथा हिंदी में 'पंचवटी', जयद्रथवध (मैथिलीशरण गुप्त), 'रश्मिरथी' 'कुरुक्षेत्र' (दिनकर) आदि नामकरण वक्रता के उदाहरण हैं।

12.4 वक्रोक्ति : समर्थक आचार्य एवं उनके मत

आचार्य कुंतक : भारतीय काव्यशास्त्र में वक्रोक्ति को सिंद्धांत के रूप में प्रवर्तित करने का श्रेय आचार्य कुंतक को है। 'वक्रोक्ति जीवितम' इनका प्रसिद्ध ग्रंथ है। कुंतक का समय दसवीं। सदी का अंत और ग्यारहवीं सदी का आरंभ माना जाता है। कुंतक अभिनव गुप्त के समकालिक और राजशेखर के परवर्ती माने जाते हैं। कुंतक की केवल एक रचना 'वक्रोक्ति जीवित' ही उपलब्ध हो सकी है। कुंतक का नाम कहीं-कहीं 'कुंतल' भी मिलता है। किंतु कुंतक ही प्रचलित है।

कुंतक की प्रसिद्धि वक्रोक्ति का विस्तृत विवेचनकर उसे सिद्धांत रूप में स्थापित करने के कारण हैं। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों– मम्मट, दण्डी आदि से वक्रोक्ति के संबंध में प्रेरणा प्राप्त की। पहले वक्रोक्ति की एक प्रमुख अलंकार के रूप में मान्यता थी। आचार्य कुंतक ने वक्रोक्ति की महत्ता को समझते हुए इसको व्यापकता प्रदान की। उन्होंने वक्रोक्ति के अंतर्गत ही साहित्य या वाक्य के समस्त तत्वों को बड़ी विद्वता और कुशलता के साथ समाविष्ट किया। वक्रोक्ति के संबंध में कुंतक की विवेचना सर्वथा मौलिक है। कुंतक वक्रोक्ति को काव्य का जीवित (प्राण) मानते हैं।

उन्होंने वक्रोक्ति का स्वरूप स्पष्ट करते लिखा है "वैदग्ध्यभंगी भणितिः" जिसका तात्पर्य है– लोक सामान्य से विशिष्ट तथा भंगिमायुक्त कथन। इसीलिए कुंतक वक्रोक्ति संप्रदाय के प्रवर्तक कहे जाते हैं।

वक्रोक्ति का इतिहास : आचार्य कुंतक द्वारा वक्रोक्ति को सिद्धांत या संप्रदाय रूप में प्रवर्तित करने से बहुत पहले ही संस्कृत साहित्य में इस शब्द (वक्रोक्ति) का प्रयोग अनेक अर्थों में प्रचलित था। संस्कृत के मनीषियों ने 'वक्र' शब्द का प्राचीनतम प्रयोग अथर्ववेद में खोजा है– 'अथं यो वक्रो विरूपर्व्यगों मुखानि वक्रा व्रजिना कृणोशि।' (*अथर्ववेद* 7-58-4, *भारतीय आलोचनाशास्त्र*, पृ. 242 (*ले. राजवंश सहाय 'हीरा'*) पर उद्‌धृत। मेघदूत (पूर्वमेघ), अमरू शतक और कादम्बरी में इसका प्रयोग मिलता है। कालिदास ने 'वक्रः पंथा' टेढ़ा मार्ग के अर्थ में किंतु बाणभट्ट ने 'वक्रोक्ति' शब्द का प्रयोग 'क्रिडालाप, परिहास-जल्प, वाक् छल तथा चमत्कारपूर्ण कथन के अर्थ में किया है।

भामह : अलंकारशास्त्र (*काव्यशास्त्र*) में वक्रोक्ति का शास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में सर्वप्रथम प्रयोग भामह ने अपने ग्रंथ 'काव्यालंकार' (2/85) में किया। उन्होंने अलंकार को

BHDC-106.indd 160 19-03-2021 08:51:38

काव्य की आत्मा स्वीकार किया और वक्रोक्ति को अलंकारों का सर्वस्व माना। भामह ने यहाँ तक घोषित किया कि वक्रोक्ति के बिना कोई अलंकार संभव नहीं है। इसके द्वारा ही अर्थ में रमणीयता आती है। अतः इसके लिए कवि को प्रयत्न करना ही चाहिए –

सैशा सर्वत वक्रोक्तिइनयाऽर्थो विभज्यते।
यत्नोऽस्यां: कविना कार्यः कोऽलंकारोऽनयाविना।

स्पष्ट है कि वक्रोक्ति से भामह का अभिप्राय शब्द और अर्थ का वैचित्र्य (सौंदर्य) तथा अर्थ का आह्लादकारी संप्रेषण है। वक्रताहीन कथन को भामह काव्य न मानकर वार्ता (सामान्य बातचीत या कथन) मानते हैं कहा जा सकता है कि वक्रोक्ति को गंभीर और व्यापक महत्व प्रदान कर भामह ने कुंतक के लिए ' वक्रोक्ति सिद्धांत' प्रतिपादन हेतु पृष्ठभूमि प्रस्तुत की।

दण्डी : भामह के बाद दण्डी ने अपने ग्रंथ 'काव्यादर्श'में वक्रोक्ति विवेचना की और भामह की भाँति उसे सभी अलंकारों का मूल स्वीकार किया। दण्डी ने समस्त वाङ्मय को दो रूपों में विभाजित किया –

द्विधा भिन्नं स्वभावोक्तिर्वक्रोक्तिश्चेति वाङ्मयम्!"

स्वभावोक्ति में व्यक्तियों, घटनाओं, वस्तुओं आदि का सीधा और सहज वर्णन होता है। यह वर्णन कल्पना प्रधान न होकार यथार्थ के निकट होता है। वक्रोक्ति के अंतर्गत जो भी वर्णन या चित्रण किया जाता है, वह वैचित्र्यपूर्ण अर्थात् चमत्मारयुक्त होता है। वक्रोक्ति के अंतर्गत उपमा आदि अन्य अलंकार आ जाते हैं। दण्डी 'काव्यादर्श' में स्पष्ट करते हैं कि श्लेष से युक्त वक्रोक्ति और अधिक प्रभावमयी हो जाती है।

वामन : वक्रोक्ति का विवेचन वामन ने भी किया किंतु उसे एक अर्थालंकार के रूप में सीमित कर दिया। वामन वक्रोक्ति का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहते हैं – 'सादृश्याल्लक्षणा वक्रोक्ति' अर्थात् सादृश्य पर आश्रित लक्षणा वक्रोक्ति है।

रूद्रट : रूद्रट ने वक्रोक्ति को और भी सीमित कर दिया उन्होंने उसे केवल शब्दालंकार माना और उसके दो भेद किए (क) श्लेष वक्रोक्ति और (ख) काकु वक्रोक्ति। रूद्रट द्वारा वर्गीकृत श्लेष वक्रोक्ति वस्तुतः सभंगश्लेष वक्रोक्ति है क्योंकि इसमें श्लिष्ट पद भंग होने पर जो अर्थ देता है, वह वैचित्र्यपूर्ण होता है जैसे –

चिर जीवहु जोरी जुरै क्यों न सनेह गँभीर।
को घटि ये बृषभानजा वे हलधर के बीर।। (*बिहारी*)

यहाँ 'वृषभ + अनुजा– बैल की बहन अर्थात् गाय तथा हलधर (बैल) के वीर (भाई) अर्थात् बैल। उधर राधाकृष्ण की जोड़ी तो श्लेष वक्रोक्ति में गाय-बैल की जोड़ी।'

काकु वक्रोक्ति में उच्चारण और स्वरों के आरोह-अवरोह से उक्ति (कथन) में वक्रता उत्पन्न होती है। यथा –

मैं सुकुमारी नाथ वन जोगू। तुम्हहिं उचित तप मोकहँ भोगू। (रामचरितमानस, अयोध्या कांड)

सीता जी राम से कहती हैं – कि मैं सुकुमारी हूँ और आप वन के योग्य हैं? अर्थात् यदि मैं सुकुमारी हूँ तो आप भी सुकुमार हैं।

वस्तुतः रूद्रट ने वक्रोक्ति को वह रूप प्रदान नहीं किया जो भामह और दण्डी द्वारा उसे प्राप्त हुआ था।

BHDC-106.indd 161 19-03-2021 08:51:38

आचार्य मम्मट (*काव्यप्रकाश*) और आचार्य विश्वनाथ (*साहित्यदर्पण*) ने वक्रोक्ति को अलंकार के रूप में ही विवेचित किया है। जिससे उसका स्वरूप सीमित हो गया। आचार्य आनन्दवर्धन और अभिनवगुप्त वक्रोक्ति के विषय में भामह से सहमत थे किंतु स्वयं उसपर कुछ विचार नहीं किया। आचार्य भोज (सरस्वती कण्ठाभरण) ने अपने वक्रोक्ति विवेचन में दण्डी से प्रभाव ग्रहण किया है। उन्होने आचार्य दण्डी द्वारा किए गए वाङ्मय के दो भागों के अतिरिक्त एक भाग और कर दिया अर्थात् भोज ने तीन भाग किए– वक्रोक्ति, स्वभावोक्ति और रसोक्ति। उपमा आदि अलंकारों की प्रधानता होने पर वक्रोक्ति गुणों की प्रधानता होने पर स्वभावोक्ति तथा विभाव–अनुभाव आदि के योग से रसनिष्पत्ति होने पर रसोक्ति होती है। इस प्रकार भामह और दण्डी द्वारा वक्रोक्ति को दी गई व्यापकता और महत्ता धीरे-धीरे सीमित होती गई और वह एक अलंकार के रूप में रह गई।

12.5 हिंदी आलोचकों के वक्रोक्ति संबंधी मत

हिंदी के रीतिकाल में रीति या लक्षण ग्रंथों का निर्माण, संस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों के आधार पर हुआ। डॉ. भगीरथ मिश्र ने अपने ग्रंथ 'हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास में लिखा है "आधार के विषय में यह कहा जा सकता है कि संस्कृत के काव्यशास्त्र पर लिखे गए सभी ग्रंथ हिंदी काव्यशास्त्र के लक्षण और उदाहरण तक में आधारस्वरूप उपयोग में लाये गये, (पृ. 30)। हिंदी में अलंकार संप्रदाय और रस संप्रदाय से संबंधित रीतिग्रंथों का निर्माण अधिक हुआ है। श्रृंगार और नायिका भेद के भी अनेक ग्रंथ मिलते हैं। रीतिकालीन आचार्यो ने अपने वक्रोक्ति का एक अलंकार के रूप में वर्णन किया है, सिद्धांत के रूप में इसे महत्व नहीं मिल सका। आचार्य केशवदास, जसवंत सिंह और भूषण ने वक्रोक्ति को अर्थालंकार माना जब कि भिखारी दास ने इसका निरूपण श्लेष अलंकार वर्ग के अंतर्गत किया है। अन्य बहुत से आचार्यों ने शब्दलंकार के रूप में वक्रोक्ति का विवेचन किया।

आधुनिक काव्य में 'रत्नाकर' पद्म सिंह शर्मा, हरिऔध आदि काव्य-मर्मज्ञों ने वक्रोक्ति को महत्व प्रदान किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने वक्रोक्ति सिद्धांत की अलोचना की और उसे चमत्कार प्रधान स्वीकार किया। उनकी दृष्टि में चमत्कार और उक्ति वैचित्य काव्य का व्युत्पक लक्षण नहीं है क्योंकि बिना चमत्कार और वैचित्य के भी उक्तियाँ मार्मिक हो सकती है। लक्ष्मीनारायण 'सुधांशु', बाबू गुलाबराम और डॉ. नगेन्द्र ने वक्रोक्ति सिद्धान्त का व्यवस्थित रूप में विवेचन विश्लेषण किया है। छायावादी कवियों ने भी वक्रोक्ति के महत्व को स्वीकार किया।

12.6 वक्रोक्ति सिद्धांत का मूल्यांकन

वक्रोक्ति को आचार्य भामह के काल में ही विशेष स्थान प्राप्त था। सभी अलंकारों के सौंदर्य का मूल वक्रोक्ति को ही माना जाता था और यहाँ तक कहा गया– 'कोऽलंकारोऽ नया बिना'। वक्रोक्ति के बिना काव्य केवल वार्ता रह जाता है। कुंतक ने वक्रोक्ति के महत्व को समझते हुए उसे सिद्धांत रूप में प्रवर्तित किया। वक्रोक्ति सिद्धांत से पूर्व अलंकार, रस, रीति तथा ध्वनि सिद्धांत भारतीय काव्यशास्त्र में चर्चित थे। इनमें ध्वनि सिद्धांत का सर्वाधिक वर्चस्व था। उसमें ध्वनि को काव्यात्मा (अंगी) और अलंकारों को अंगरूप में मान्यता दी गई जबकि रसध्वनि (रस) को प्रमुख स्थान दिया गया। संभवतः इसीलिए कुंतक ने प्रमुख अलंकार वक्रोक्ति को सिद्धांत (संप्रदाय) रूप में प्रवर्तित कर उसे व्यापकता और महत्व प्रदान किया। वक्रोक्ति सिद्धांत में वचन वकताः अथवा वैदग्ध्य भंगी भणिति काव्य का प्राण तत्व है किंतु रस को भी महत्व दिया गया। वस्तुतः भाव या रस-रहित वक्रता का कोई महत्व नहीं है। कुंतक

BHDC-106.indd 162 19-03-2021 08:51:38

ने भावदीप्त वकता को अपने सिद्धांत में स्वीकृति दी है। ध्वनि सिद्धांत में अलंकार को गौण स्थान देने के कारण कुंतक ने उसके विरोध में अपने सिद्धांत 'वक्रोक्ति' को व्यापक रूप दिया। उन्होंने वक्रोक्ति सिद्धांत को लघुतम इकाई वर्ण-वक्रता से लेकर प्रबंध वक्रता तक विस्तार दिया। यह मानना समीचीन होगा कि कुंतक ने वक्रोक्ति सिद्धांत के माध्यम से कवि-व्यापार कवि-कौशल (कलावाद) की प्रतिष्ठा की। वक्रोक्ति सिद्धांत अपने व्यापक उद्देश्य में सफल नहीं हो सका क्योंकि मम्मट और विश्वनाथ आदि आचार्यों ने इसके महत्व को गौण कर दिया। परिणामस्वरूप वक्रोक्ति की अलंकार के रूप में मान्यता रह गई। इतने पर भी वक्रोक्ति सिद्धांत की उपलब्धियाँ भी है। इसमें काव्य के वस्तु तत्व का विकास लक्षित होता है। इस सिद्धांत के महत्व का आकलन करते हुए डॉ. नगेंद्र लिखते हैं ''भारतीय काव्यशास्त्र के इतिहास में ध्वनि के अतिरिक्त इतना व्यवस्थित विधान किसी अन्य काव्य का नहीं है, और काव्यकला का इतना व्यापक एवं गहन विवेचन तो ध्वनि सिद्धांत के अंतर्गत भी नहीं हुआ। वास्तव में काव्य के वस्तुगत सौंदर्य का ऐसा सूक्ष्म विश्लेषण केवल हमारे काव्यशास्त्र ही नहीं, पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में भी दुर्लभ है।'' (*हिंदी वक्रोक्ति जीवित की भूमिका,* पृ. 282)

12.7 सारांश

वक्रोक्ति भारतीय काव्यशास्त्र का एक महत्वपूर्ण काव्य सिद्धांत हैं, जिसके प्रवर्तन का श्रेय आचार्य कुंतक को हैं। कुंतक से पूर्व भी वक्रोक्ति एक प्रमुख अलंकार रूप में ही नहीं अपितु अलंकारों का मूल मानी जाती थी। आचार्य मामह, दण्डी, आदि ने वक्रोक्ति को विशेष महत्व दिया। इसकी महत्ता को समझकर कुंतक ने इसे व्यापकता प्रदान कर सिद्धांत रूप में स्थापित किया। कुंतक के अनुसार वक्रोक्ति 'वैदग्ध्य भंगी भणिति' है अर्थात् (सौंदर्य) तथा भंगिमा युक्त अभिव्यक्ति है जो सहृदयों के लिए आह्लादकारी है। वक्रोक्ति रहित काव्य सामान्य वार्ता है, जो सहृदयों को आह्लाद नहीं दे सकता है। आचार्य कुंतक ने अपनी प्रतिभा से वक्रोक्ति को वर्ण से लेकर प्रबंध तक व्यापकता प्रदान की। उनका विवेचन दर्शन पर आधारित न होकर व्याकरण के आधार पर है। कुंतक ने वक्रोक्ति के छः भेद किए और उनके अनेक उपभेदों की भी विवेचना की। छः भेद हैं– वर्ण विन्यास वक्रता, पद पूर्वार्द्ध वक्रता, पदपरार्द्ध वक्रता, वाक्य वक्रता, प्रकरण वक्रता तथा प्रबंध वक्रता। आचार्य कुंतक ने पूर्व प्रचलित काव्य सिद्धांतों– अलंकार, रस, ध्वनि तथा रीति को बड़ी कुशलतापूर्वक वक्रोक्ति सिद्धांत में समाहित किया और वक्रोक्ति को काव्य के जीवित (प्राण) के रूप में प्रतिष्ठित किया। इनता होने पर भी वक्रोक्ति को ध्वनिवादी तथा रसवादी आचार्यों ने महत्व नहीं दिया। मम्मट और विश्वनाथ ने वक्रोक्ति सिद्धांत का खण्डन करते हुए केवल अलंकार के रूप में सीमित कर दिया। हिंदी के रीतिकालीन आचार्यों ने भी संस्कृत के लक्षण ग्रंथों का आधार लेकर अपने-अपने ग्रंथों का निर्माण किया। उन्होंने, रस, अलंकार रीति ध्वनि आदि को ही विशेष महत्व दिया। वक्रोक्ति को अलंकार में हिंदी के आलोचकों ने भी मान्यता दी। जिनमें पद्म सिंह शर्मा, लक्ष्मी नारायण', सुधांशु', बाबू गुलाब राय, डॉ नगेंद्र आदि उल्लेखनीय हैं। छायावादी कवियों ने भी वक्रोक्ति को महत्व दिया। उनके काव्य में वक्रोक्ति के अनेक रूपों का प्रयोग दृष्टिगत होता है।

12.8 अवधारणात्मक शब्द

उपचार वक्रता : संस्कृत काव्यशास्त्र में उपचार का अर्थ, आरोप, साधर्म, समानता या सादृश्य है। जब भिन्न स्वभाव वाली वस्तु, व्यक्ति (प्रस्तुत) पर थोड़ी सी समानता के आधार पर अप्रस्तुत में आरोप किया जाता है तब यह वक्रता होती है।

BHDC-106.indd 163 19-03-2021 08:51:38

विशेषण वक्रता : जब विशेषण के कारण या उसके प्रभाव से किसी के कारक या क्रिया में सौंदर्य उत्पन्न होता है तब विशेषण वक्रता उत्पन्न होती है।

भाव वैचित्र्य वक्रता : क्रिया की वक्रता को ही भाव वैचित्र्य वक्रता कहा जाता है। जब क्रिया कार्य का निष्पादन कर साध्य रूप में प्रयुक्त होती है तब ऐसी वक्रता आती है।

लिंग वैचित्र्य वक्रता : जब लिंग संबंधी प्रयोग करते समय वैचित्र्य प्रकट होता है तब लिंग वैचित्र्य वक्रता उत्पन्न होती है किन्तु लिंग प्रयोग का औचित्य अवश्य होना चाहिए।

12.9 उपयोगी पुस्तकें

उपाध्याय बलदेव – *संस्कृत आलोचना,* उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ।

दीक्षित सूर्यप्रसाद (सं.) *हिंदी का अपना काव्यशास्त्र,* विश्वविद्यालय प्रकाशन हिंदी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

मिश्र भागीरथ, *काव्यशास्त्र,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर।

मिश्र भागीरथ, *हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास* – प्रकाशक, लखनऊ विश्वविद्यालय (हिंदी विभाग)।

शर्मा रामानंद, *भारतीय काव्य शास्त्र* – लोकवाणी प्रकाशन, संस्थान दिल्ली।

श्रीवास्तव देवकी नंदन, *काव्यशास्त्र चर्चा* – नंदन प्रकाशन, रानीकटरा; लखनऊ।

हीरा राजवंश सहाय, *भारतीय आलोचना शास्त्र;* बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना।

हीरा राजवंश सहाय, *भारतीय काव्यशास्त्र* के प्रतिनिधि सिद्धांत चौखंभा, विद्याभवन, वाराणसी।

वर्मा धीरेंद्र (सं.) *हिंदी साहित्य कोष, भाग-1,* ज्ञानमंडल लि. वाराणसी।

12.10 बोध प्रश्न

1) वक्रोक्ति का अर्थ और स्वरूप स्पष्ट कीजिए।

2) वक्रोक्ति के विभिन्न प्रकारों की चर्चा कीजिए।

3) वक्रोक्ति समर्थक आचार्यों के वक्रोक्ति संबंधी मतों की चर्चा कीजिए।

4) वक्रोक्ति सिद्धांत का मूल्यांकन कीजिए।

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) देखिए भाग 12.2

2) देखिए भाग 12.3

3) देखिए भाग 12.4

4) देखिए भाग 12.6